IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पराशर होराशास्त्र के लेखक का विश्लेषणात्मक परिचय

Dr. Narayan Kumar Jha*, Dr. Sarswati Kumari**

*Assistant Professor, **Research Scholar

*Department of Sanskrit, ** Dept. og Sanskrit

*R. B. Jalan Bela College, Bela, Darbhanga, Bihar - 846005, ** L. N. Mithila University

Abstract: ज्योतिष शास्त्र के सभी ग्रंथों पर जब दृष्टि डालते हैं तो अनुभव होता है कि परवर्ती आचार्यों के मंतव्य का मूल स्थान पराशर होराशास्त्र ही है। एक प्रकार से पराशर के ज्योतिषीय विचारों को तकरीबन सभी आचार्यो ने येन केन प्रकार से अपने ग्रन्थों में चर्चा की है, या यूं कहें कि महर्षि पराशर के बाद के सभी आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में उनकी कही बातों की चर्चा किया है तो यह कहना गलत भी नहीं होगा। कहा भी गया है –

तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः□1

जिस प्रकार वेदों को प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं होती है वे स्वयं प्रमाणित हैं, तीर्थ का जल और अग्नि स्वयं शुद्ध हैं, उन्हें शुद्ध करने के लिए किसी पवित्रीकरण की आवश्यकता नही होती उसी प्रकार पराशर के वचनों को प्रमाण रूप में उद्धृत करने की कला सभी जगहों पर देखने को मिलता है। पराशरीय कथनों व निर्णयों को प्रमाणित करने के लिए किसी अन्य ऋषि के वाक्यों की आवश्यकता नहीं है।

Index Terms - राशि, नक्षत्र, ज्योतिष, पराशर, काल, समय।

Introduction

पराशर सम्प्रदाय या पराशरीय विचारधारा, विचारों की उस गंगा के समान है, जो समस्त भारत भूमि को अपने अमृत से आप्लावित करती हुई अपनी मंजिल पर पहुंचती है और साथ ही अनेक विचारधारा रूपी नदियों को भी अपने भीतर समेट लेती है। अतः 'पराशर' का मत भी गंगानद के समान हैं और अन्य ज्योतिषाचार्यों की विचारधारा नदियाँ ही है। यह एक अविच्छिन्न रूप से बहने वाली, सदानीरा नदी है। इस दृष्टि से देखने पर महर्षि पराशर का स्थान जैमिनी मुनि से ऊँचा ही सिद्ध होता है।

जैमिनी के द्वारा कही हुई सभी बातें पराशर सम्प्रदाय में सर्वतोभावेन सम्मिलित हो गयी है, इसका आभास पराशर होराशास्त्र को देखने से ही मिल जाता है।

वराहमिहिर जैसे आचार्य भी पराशर के सिद्धांतों के सामने नतमस्तक हो जाते हैं। वे अपने ग्रंथों में बहुत सारे जगहों पर पराशर मत का उल्लेख करके उसका अंगीकरण करते हैं। अतः पराशर सम्प्रदाय सम्पूर्ण भारत में चतुर्दिक, पुष्पित व पल्लवित होता रहा है तथा ज्योतिष के विषय में उनके द्वारा रचित *'बृहदपाराशरहोराशास्त्र'* को अंतिम निर्णायक ग्रंथ के रूप में माना जाता है। उपर्युक्त जानकारी के आधार पर अगर हम यह कहें कि महर्षि पाराशर फलित ज्योतिष शास्त्र के स्तम्भ हैं तो यह कहना कहीं से भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

महर्षि पराशर का परिचय

1 उत्तररामचरितम्, भवभूति, प्रथम अंक, श्लोक सं0 13, पृ0 सं0 38।

महर्षि पराशर को ऋषियों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता रहा है। उनकी पत्नी का नाम अरून्धती था। वैसे से महर्षि पराशर के जीवन वृत्त का अत्यधिक जानकारी नहीं होने के कारण बहुत कम पुस्तकों में इनके जीवनी के बारे में लिखा गया है। आनुसंधानिक क्रम में कर्नल अशोक कुमार गौड़ और उदय कान्त मिश्र की सम्मिलित पुस्तक में कई पौराणिक कहानियों का सहारा लेते हुए महर्षि पराशर की जीवनी से जुड़े हुए तथ्यों को उजागर करने का प्रयास किया गया है।[2] उनके अनुसार सत्यव्रत के पिता त्रयारूण ने एक छोटे से अपराध के कारण सत्यव्रत को देश से निकाल दिया था। यहाँ पर देश से क्यों निकाला था इस बात की चर्चा नहीं की गई है। हो सकता है कि किसी घनघोर अपराध के लिए ही सम्भवतः इतनी बड़ी सजा दी गई हो। त्रयारूण का आधिपत्य पृथ्वी तथा स्वर्ग को छोड़कर बाकी की सारे लोकों पर था। सत्यव्रत ने देश से निकाले जाने की स्थिति में संपूर्ण शरीर के साथ स्वर्ग जाने की अपनी इच्छा प्रकट की। अपनी इसी इच्छा के कारण वो वशिष्ठ मुनि और उनके पुत्र शक्ति से मिलने गये। उन दोनों के कई बार समझाने के बाद भी मानव शरीर/स्थूल शरीर/सूक्ष्म शरीर लेकर स्वर्ग जाना ईश्वर के नियम के विरूद्ध है (यहाँ पर इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका मतलब स्वर्ग में रहने वाले जीवों और पृथ्वी पर विचरण करनेवाले जीवों के शरीर की बनावट भले ही जैसी भी हो परन्तु इतना तो स्पष्ट है कि स्वर्ग में स्थूल शरीर/सूक्ष्म शरीर का कोई मोल नहीं होता)। चूंकि विश्वामित्र और वशिष्ठ ऋषि में आपस में मनमुटाव था, इसीलिए इस कार्य का भार विश्वामित्र जी ने खुशी से स्वीकार कर लिया। यहाँ यह भी देखने को मिलता है कि दोनों कुलों की आपसी दुश्मनी में विश्वामित्र के शाप के कारण रूधिर नाम का राक्षस शक्ति को खा जाता है। पराशर एक मन्त्रद्रष्टा ऋषि, शास्त्रवेत्ता, ब्रह्मज्ञानी एवं स्मृतिकार है। ये महर्षि वसिष्ठ के पौत्र, गोत्रप्रवर्तक, वैदिक सूक्तों के द्रष्टा और ग्रंथकार भी हैं। पराशर शर–शय्या पर पड़े भीष्म स मिलने गये थे। परीक्षित् के प्रायोपवेश के समय उपस्थित कई ऋषि–मुनियों में वे भी थे। वे छब्बीसवें द्वापर के व्यास थे।

ज्योतिष के भीष्म पितामह ज्योतिषाचार्य महर्षि पराशर

भारतीय ज्योतिष के प्रवर्तकों में महर्षि पराशर अग्रगण्य हैं। महर्षि प्रोक्त ग्रंथों में केवल इन्ही का सम्पूर्ण ग्रंथ *'बृहत्पराशरहोराशास्त्र'* नाम से उपलब्ध हैं। अन्य प्रवर्तक ऋषियों के वचन तो इतस्ततः मिलते हैं, लेकिन किसी सम्पूर्ण ग्रंथ के अद्यावधि दर्शन नही होते हैं। यह बात पराशर के मत की सव व्यापकता व सार्वभौमिकता का एक प्रस्तुत प्रमाण है। पराशरहोराशास्त्र की गुणग्रहिता व सम्पूर्णता के कारण ही इनकी यह रचना सर्वत्र प्रचलित है।

पराशर ऋषि का समय

महर्षि पराशर के समय को लेकर विभिन्न ज्योतिषचार्यों ने लगभग चुप्पी सी साधते हुए अलग–अलग प्रकार से अनुमान के आधार पर ही उनके काल को बतलाया है। सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ0 सुधीकान्त भारद्वाज जी के अनुसार पराशर का काल महाभारत काल के पराशर को लगभग 2700 ई0 पू0 माना है और जिन पराशर के समय में दक्षिणायन श्रवणा नक्षत्र के अन्त में था उनका समय लगभग 1200 ई0 पू0 माना है।[3] कलियुग नामक कालखण्ड के प्रारम्भ में होने के कारण उत्तरोत्तर बलियस्त्व के सिद्धांत से कलियुग में पराशर मत्त की सर्वोपरि मान्यता स्पष्ट है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के एक या दो स्थानों पर ऐसा आभास मिलता है कि उस समय वशिष्ठ व पितामह सिद्धान्त का प्रचार था अतः नारद, वशिष्ठ, पितामहादि ज्योतिष प्रवर्तकों के पश्चात पराशर का समय मानने से परम्परया इनका अस्तित्व कलियुग के आदि में प्रतीत होता है। डॉ0 पी0 वी0 काणे ने प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्यों की काल निर्धारण की सूची बनाई हुई है[4] वहाँ भी पराशर मुनि की चर्चा नहीं मिल पाती है।

---

2 ज्योतिष प्रवेशिका, कर्नल अशोक कुमार गौड़ एवं अशोक चन्द्र मिश्र, पृ0 सं0 3–5।

3 SuryaSiddhant and Astrolinguistic Study, Dr. Sudhikant Bharadwaja, P. No. 83-85.

4 धर्मशास्त्र का इतिहास, अनुवादक – अर्जुन चौबे काश्यप, अ0 1, पृ0 सं0 63।

चूंकि पराशर का सृष्टि तत्व निरूपण सूर्य सिद्धांत के सामग्री से मेल खाता है। अतः पौराणिक काल में आधुनिक मत से पाणिनि से पहले, चाणक्य से भी पहले, वैदिक रचना काल के बाद, पुराण युग में, महाभारत युद्ध की घटना के आसपास पराशर विद्यमान थे। अर्थशास्त्र में पराशर का नामोल्लेख पाया जाता है। गरुड़ पुराण में पराशरस्मृति के श्लोकों का संग्रह किया गया है। बृहदारण्यकोपनिषद व तैत्तिरीयारण्यक में व्यास व पराशर के नाम आते हैं।

भारतीय ज्योतिषशास्त्र में आचार्य वराहमिहिर का नाम काफी चर्चित है। उन्होंने अनेक पूर्ववर्ती आचार्यों के साथ अपनी संहिता में महर्षि पराशर का नाम तथा उनके सिद्धान्तों की चर्चा की है।[5] रोहिणी योग के चर्चा पर भी वराहमिहिर ने गर्ग और कश्यप के साथ–साथ पराशर की चर्चा की है।[6]

यास्क ने अपने *'निरुक्त'* में पराशर के मूल का भी उल्लेख किया है। ये कृष्णद्वैपायन व्यास के पिता थे तथा इनके पिता का नाम शक्ति था। वराह ने पराशर को शक्तिपुत्र या शक्ति पूर्व कहा है।

अग्निपुराण में स्पष्टतया इन्हें शक्ति का पुत्र ही कहा है। यही पराशर मत्स्यगंधा सत्यवती पर मोहित हुए थे तथा सत्यवती के गर्भ से पराशर पुत्र कृष्णद्वैपायन व्यास उत्पन्न हुए थे, यह तकरीबन कई जगहों पर चर्चा हुई ह। इन्ही पराशर ने कलियुग में व्यवस्था बनाये रखने के लिए पराशरस्मृति या द्वादशाध्यायी धर्मसंहिता की रचना की थी।

—ते तु मानवो धर्मस्त्रेतायां गौतमः स्मृतः।

द्वापरे शंखलिखितः कलौ पराशरः स्मृतः[7]

कृष्णद्वैपायन व्यास जी जब कुछ मुनियों को बदरिकाश्रम (बद्रोनाथ तीर्थ) में स्थित अपने पिता पराशर के पास ले गए थे तब पराशर ने उन्हें वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था परक ज्ञान दिया था। वराह ने इन्ही शक्तिपुत्र पराशर को होराशास्त्र का प्रवक्ता भी माना है।व राहमिहिर पांचवी सदी में हुए हैं, ऐसा माना जाता है। अतः प्रत्येक परिस्थिति में आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व पराशर के समय को मान सकते हैं।

श्रीमद् भागवत में एक स्थान पर विदुर व मैत्रेय का वार्तालाप उल्लिखित है। इससे भी मैत्रेय, पराशर व महाभारत की कड़ियाँ मिलती प्रतीत होती है। मैत्रेय को होराशास्त्र बताने वाले महर्षि पराशर महाभारत काल में वृद्धावस्था या चतुर्थाश्रम प्राप्त ऋषि थे। महाभारत का समय परम्परया कम से कम 3000 वर्ष पूर्व माना जाता है। अतः पराशर 2–3 सहस्त्राब्दियों पूर्व भारत में हुए थे।

पराशर तन्त्र का उल्लेख भट्टोत्पल ने अनेक स्थानों पर किया है। उन्होंने बृहज्जातक की टीका में 'पाराशरी संहिता' देखने व पढ़ने की बात स्वीकार की है। 'पराशर तन्त्र' नाम से जो उद्धरण दिए गए हैं, उनका विषय तन्त्र अर्थात सिद्धांत ज्योतिष से कम व संहिता से अधिक मेल खाता है।

शिव भक्त पराशर वेदव्यास पराशर

ब्रह्मा जी के द्वारा नारद जी को प्रदान की ज्ञानमयी वचनों के आधार पर छब्बीसवें द्वापर में पराशर ने व्यास का जन्म लिया, जो ब्रह्माजी के प्रपौत्र थे तथा शक्ति से उत्पन्न हुए थे। उनके समान शिव भक्त कोई नही हुआ। उन्होंने वेद के १. ऋक् २. यजु ३. साम एवं ४. अथर्वण ये चार भाग किये तथा उनकी शाखाओं को बढ़ाया। तत्पश्चात अठारह पुराण बनाये, क्योंकि कलियुग के प्रवेश से सांसारिक जीवों की बुद्धि नष्ट हो गयी थी। उन्होंने वेद की रीतियाँ युक्ति पूर्वक पुराणों में इस प्रकार मिला दी, जिससे लोग प्रसन्न हो। जिस प्रकार की कोई वैद्य कड़वी आषधि न देकर मीठी औषधि द्वारा रोगी को प्रसन्न करता है। उन्होंने अन्य व्यासों की अपेक्षा जो कि पहले हुए थे, अधिक अच्छे पुराण बनाये। यद्यपि हमने तथा व्यास (पराशर) ने अनेकों प्रकार के प्रयत्न किए, जिससे कि व्यासमत्त प्रसिद्ध हो परंतु

5 च्यवनोऽत्रि पराशरः, वाराही संहिता, अ0 48, श्लोक 64, पृ0 सं0 180।
6 'गर्ग–पराशर–काश्यप.....' वाराही संहिता, अ0 24, श्लोक 2 पृ0 सं0 105।
7 पाराशर स्मृति, महर्षि पराशर, अ0 12, पृ0 सं0 – 42।

हमारा यत्न निष्फल हुआ और किसी न भी पुराणों को न पढ़ा। तब व्यास पराशर ने चिंतित होकर शिवजी का ध्यान किया तथा स्तुति करते हुए उनसे कहा कि हे प्रभो ! द्वापर युग व्यतीत हो गया तथा कलियुग आ गया। यद्यपि मैंने वेद के आशय पुराणों में प्रकट कर दिए, परंतु कलियुग के प्रभाव से इन्हें कोई नही समझता, प्रवृत्ति मार्ग को बढ़ रहा है, परंतु निवृति की समाप्ति हो रही है। हे प्रभो ! हे भक्तवत्सल ! किसी ने भी पुराणों को नहीं छूआ, अतः मेरा मत्त प्रसिद्ध नही होता इसलिए आप मेरी प्रार्थना सुनकर सहायता कीजिये तथा मेरे धर्म को दृढ़ कीजिये।आप अवतार लेकर मेरे मत की वृद्धि करें। हे नारद ! मेरे प्रपौत्र व्यास पराशर की इस प्रार्थना को शिवजी ने स्वीकार कर लिया तथा छब्बीसवें द्वापर के अंत में और कलियुग के प्रारंभ में सहिष्णु नामक अवतार ग्रहण कर लिया तथा १. उलूक २. विद्युत ३. सम्बल तथा ४. अश्वलायन ये चार शिष्य उत्पन्न किये तथा उन्हें योग का ज्ञान सिखाया तथा उन्होंने योग को प्रकट किया। उस योग को संसारी जीवों ने बड़े यत्न से सीखा। फिर उन्होंने वेद एवं पुराणों से अच्छे धर्म एवं मत्त प्रकट किए। शिवजी के ये चार शिष्य आश्रम जानने वाले, योगाभ्यासी तथा निष्पाप हुए। हे नारद ! इस प्रकार भगवान शिव ने अपने इन चार शिष्यों सहित योग को प्रकट कर पुराणों को प्रसिद्ध किया तथा व्यास (पराशर)जी को प्रसन्न किया। श्री हरिचरित्रामृतसागर में पराशर की चर्चा में एक दोहा भी प्रसिद्ध है जिसे पराशर दोहा के नाम से जाना जाता है –

वशिष्ठ जैगीषव्य नामा, देवल कपिल रह सुखधामा। सनंदन सनातन हि कहेउ वोढु पंचशिख नाम रहेऊ □ शुक्र चवन नर शक्रि हि, पराशर हि व्यास। शुकदेव जैमिनी ऋषि, मार्कण्डेय हरिदास □ पौलस्त्य शरद्वान, अगस्त्य अरिष्टनेमि हि। शमीक हि बुद्धिमान, मांडव्य पैल पाणिनी यह □ भागुरि याज्ञवल्क्य हि कहाये, द्वैपायन पिप्पलाद रहाये। मैत्रेय करख उपमन्यु जेहा, गोरमुख अरुणि औव तेहा □ कक्षिवान् भरद्वाज कहिजे, वेदशिर शंकुवर्ण लहीजे। शौनक परशुराम कहावे, इंद्रप्रमद और्व कवष रहावे □[8]

ततस्ते ऋषयः सर्वे धर्मतत्वार्थकांक्षिणः । ऋषिं व्यासं पुरस्कृत्य गता बदरिकाश्रमं □ नानापुष्पलताकीर्णम् फलपुष्पैरलंकृतम्। नदिप्रस्त्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् च □ मृगपक्षिनिनादाढ्यं देवतायनावृतम् । यक्षगन्धर्वसिद्धैश्च नृत्यंगीतैरलंकृतम् □ तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रं पराशर। सुखासीनं महातेजा मुनिमुख्यगणावृतम् □ कृतांजलिपुटो भूत्वा व्यासस्तु ऋषिभिः सह। प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिः समपूज्यत् □

पराशर स्मृति के अनुसार जब धर्म के तत्व की अभिलाषा करने वाले वह सम्पूर्ण ऋषि यह सुनकर श्री व्यास जी को आगे कर बदरिकाश्रम को गये। यह आश्रम अनेक भाँति पुष्पों की लताओं से पूर्ण, फल–पुष्पों से शोभायमान, नदी आर झरनों से विभूषित, पवित्र तीर्थों से शोभायमान, मृग और पक्षियों के शब्द से शब्दायमान, देवमन्दिरों से आवृत, यक्ष और गंधर्वों के नृत्यगान से शोभायमान, और सिद्धगणों से अलंकृत था। उस आश्रम में शक्ति ऋषि के पुत्र मुनिवर पराशर प्रधान मुनियों से युक्त होकर ऋषियों की सभा में सुखपूर्वक बैठे थे। इस समय में व्यास जी ने ऋषियों के साथ जाकर हाथ जोड़कर उनकी प्रदक्षिणा कर प्रणामपूर्वक स्तुति करके पूजन किया।

संस्कृत साहित्य में पराशर यह नाम आदरणीय ही नही अपितु अत्यंत प्राचीन भी है। संसार की प्राचीनतम पुस्तक ऋग्वेद में वशिष्ठ, शतायु के साथ पराशर का भी नाम आया है।[9]

इन तीनों ने राजा सुदास की विजय कामना के लिए इंद्र से प्रार्थना की थी। ऋग्वेद के प्रथम खंड, प्रथम मंडल, पंचम अध्याय सूक्त 65–73 (पृष्ठ 121 से 133 तक) तक के सूक्तों के द्रष्टा (निर्माता), दिव्य द्रष्टा, वैदिक द्रष्टा, भविष्य द्रष्टा अधभूतकर्मा भगवन् महर्षि पराशर ही माने जाते है। एक अन्य

8 श्री हरिचरित्रामृतसागर, पृष्ठ संख्या 137।

9 प्रये गृहात् ममदुस्त्वाया पराशरः शतायुर्वशिष्ठ। द्वितीय खंड ऋ0 मं0 7, अ0 2 सू0 18, मंत्र 21

उल्लेख के आधार पर पराशर नाम वाली एक वेद शाखा भी है।[10] निरुक्त में पराशर के मूल पर लिखा पाया जाता है।[11]

पाणिनि मुनि ने अपने व्याकरण शास्त्र में पराशर को भिक्षु–सूत्र प्रणेता के रूप में उद्धृत कर पाराशर्यों का भी उल्लेख किया है।[12]

वाल्मीकि रामायण में वशिष्ठ के पौत्र तथा शक्ति के पुत्र के रूप में पराशर की चर्चा हुई है। महाभारत के आदिपर्व, शांतिपर्व, अनुशासन पर्व में पराशर को लेकर पर्याप्त उल्लेख मिलता है। महाभारत में ही शक्ति पत्र (शाक्तेय) पराशर के साथ पराशर नामक एक सर्प की भी चर्चा की गई है।[13] कौटिल्य अर्थशास्त्र में पराशर एवं पाराशर्य नाम से छः बार उल्लेख हुआ है।[14]

ब्रह्मांडपुराण[15], मत्स्यपुराण[16], वायुपुराण[17], देवीभागवतपुराण[18] और विष्णु आदि पुराणों में पराशर को एवं उनके मतों को अंकित किया गया।

भारतीय ज्योतिष–शास्त्र में आचार्य वराह–मिहिर का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। इन्होंने अनेक पूर्ववर्ती आचार्यों के साथ अपनी संहिता में पराशर के नाम और सिद्धांतो को उद्धृत किया है। रोहिणी योग पर लिखते हुए उन्होंने गर्ग और कश्यप के साथ पराशर की चर्चा की है। वाराही संहिता के टीकाकार भट्टोत्पल ने पराशरीय संहिता को उद्धृत करते हुए लिखा है –

"धनिष्ठाद्यात् पौष्ठार्द्धांतं चरः शिशिरः। वसंत पौषणार्द्धात् रोहिणयाम्। सौम्यादाश्लेषार्द्धनतं ग्रीष्मः। प्रावृडाशलेषार्द्धत् हस्तान्तम्। चित्राद्यात ज्येष्ठार्द्धत् श्रवणांतम्।"[19]

वराहमिहिर के टिकाकर भट्टोत्पल ने पराशर का ऋतु–अवस्थान विषय–पाठ उद्धृत किया है। सिद्धेश्वर शास्त्री– सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव के अनुसार पराशर आयुर्वेदाचार्यों में आयुर्वेदशास्त्र प्रणेता हैं।

पराशर शब्द का अर्थ

10 काठक अनुक्रमणिका, 'इस्तु' 3/460, पृष्ठ संख्या 7।

11 द्वात्रिंशच्छ्तपदेषु पराशरः – निरुक्त (निघण्टु) 4/3

12 पाराशर्येण प्रोक्तं भिक्षु–सूत्रमधीयते। पाराशरिणो भिक्षवः। तथा पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनट सूत्रयोः। – अष्टाध्यायी – 4/3/110

13 पराशरस्तरुण को मणिरू स्कंधस्तारुणिरू। इति नामा..। महाभारत आदिपर्व, अ0 57, श्लोक 19

14 साधारण एष दोष इति पराशरः। कौटिल्य अर्थशास्त्र – 1.8 पृ. संख्या 34, तथा 1/15/59, 1/17/68, 2/17/119, 8/1/572, 8/3/583 ।

15 ब्रह्मांडपुराण – खंड 2, अध्याय 32 श्लोक 115, 2/33/3, 2/35/24,29, 4/4/65–66, 1/1/9, 3/8/11 एवं अन्य जगहों पर भी चर्चा हुई है।

16 मत्स्य–पुराण – अध्याय – 14, 53, 145 ।

17 वायुपुराण – अध्याय – 23, 59, 61, 65, 77 ।

18 देवोभागवतपुराण – प्रथम एवं द्वादश स्कन्ध में।

19 https://hi.wikipedia.org/wiki

'पराशर' शब्द का अर्थ है – *'पराशृणाति पापानीति पराशरः'* अर्थात् जो दर्शन–स्मरण करने से ही समस्त पापों का नाश करता है, वही पराशर है। आचार्य सायण ने पराशर शब्द की चर्चा करते हुए लिखा है कि शत्रुओं को परास्त करके उन्हें नष्ट कर देने वाले को पराशर कहते हैं[20]। निरुक्त में एक अन्य स्थल पर पराशर की दूसरी व्याख्या अलग प्रकार से देखने को मिलती है, जो चारों ओर से राक्षसों का विनाश करने में समर्थ हो वह पराशर है[21]। यह माता के उदर से वेद ऋचाओं को बोलते हुए निकाला था, अतः इसका नाम पराशर रखा गया।[22] कामदेव के सम्मोहन, उन्मादन, शोषण, तापन, स्तम्भन, इन पांच बाणों का प्रभाव अपने पर न होने देने के यतन के कारण ऋषियों ने भी इन्हें *'पराशर'* ही कहा।[23] वध की इच्छा रखने वाले राक्षसों के बाणों को इन्होंने परे कर दिया। अतः बुद्धिमानों ने इनका नाम *'पराशर'* कहा।[24] उस बालक ने गर्भ में आकर परासु (मरने की इच्छा वाले) वसिष्ठ मुनि को पुनरू जीवित रहने के लिये उत्साहित किया था इसलिये वह लोक में पराशर के नाम से विख्यात हुआ।[25] जो दर्शन स्मरण करने मात्र से ही समस्त पाप–ताप को छिन्न–भिन्न कर देते हैं वे ही पराशर हैं।[26]

अतः प्राण–परित्याग करने की इच्छा वाले वशिष्ठ का आधार होने के कारण, या काम–बाण प्रभावों को परास्त करने के कारण, या फिर शरों से दूर ले जाकर इनका रक्षण करने के कारण अथवा शत्रुओं का पराभव करने वाला होने के कारण इस बालक का नाम पराशर ही व्यवहार में आया। □

महर्षि पराशर की बाल्यावस्था और शिक्षा व्यवस्था

पराशर के पिता का नाम शक्तिमुनि था और उनकी माता का नाम अदृश्यन्ती था। शक्तिमुनि वसिष्ठऋषि के पुत्र और वेदव्यास के पितामह थे। इस आधार पर पराशर वसिष्ठ के पौत्र थे।

सुतं त्वजनयच्छक्तेरदृश्यन्ती पराशरम्।

काली पराशरात् जज्ञे कृष्णद्वैपायनं मुनिम् □[27]

शक्तिमुनि का विवाह तपस्वी वैश्य चित्रमुख की कन्या अदृश्यन्ती से हुआ था। माता के गर्भ में रहते हुए पराशर ने पिता के मुँह से ब्रह्माण्ड पुराण सुना था, कालान्तर में उन्होंने प्रसिद्ध जितेन्द्रिय मुनि एवं युधिष्ठिर के सभासद जातुकर्ण्य को उसका उपदेश किया था। पराशर बाष्कल के शिष्य थे। ऋषि बाष्कल ऋग्वेद के आचार्य थे। याज्ञवल्क्य, पराशर, बोध्य और अग्निमाढक इनके शिष्य थे। बाष्कल ने ऋग्वेद की एक शाखा के चार विभाग करके अपने इन शिष्यों को पढ़ाया था। पराशर याज्ञवल्क्य के भी शिष्य थे।

---

20 हे पराशर परागत्य शृणाति हिनस्ति शत्रुन् इति पराशरः □*f*□ – सायण भाष्य

21 पराशातयिता यातुनाम् इति पराशरः।... परा परितः यातूनां... रक्षसाम्। शातयिता विनाशकः। – आचार्य यास्क, निरुक्त ६.३०।

22 परं मातुर्निमातुरनिजायाययददरं तदयं यतः।
ऋचमुच्चार्य निर्भिद्य निर्गात स पराशरः – आचार्य यास्क, निरुक्त ६.1।

23 परस्य कामदेवस्य शरः सम्मोहनादयः। न विद्यन्ते यतस्तेन ऋषिरुक्तः पराशरः। – पाराशर स्मृति श्लोक संख्या 2, पृष्ठ संख्या 5।

24 पराकृताः शरा यस्मात् राक्षसानां वधार्थिनाम्। अतः पराशरो नामः ऋषिरुक्तः मनीषिभिः।। पराशातयिता यातूनाम् इति पराशरः। – आचार्य यास्क, निरुक्त ३, ३१/२।

25 परासुः स यतस्तेन वशिष्ठः स्थापितो मुनिः। गर्भस्थेन ततो लोके पराशर इति स्मृतः ।।४।।

26 पराशृणाती पापानीति पराशरः ।।५।।

27 अग्निपुराण, पृ0 सं0 285।

इक्ष्वाकुवंशी अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण के पौत्र सुदास हुए थे। उनके पुत्र वीरसह (मित्रसह) हुए, जो सुदास–पुत्र होने से सौदास भी कहलाते थे। महर्षि वसिष्ठ के शाप से वे नरभोजी राक्षस कल्माषपाद हुए। राक्षस रूप कल्माषपाद ने शक्ति सहित वसिष्ठ के सौ पुत्रों को खा लिया। इससे दुःखार्त वसिष्ठ ने आत्महत्या के कई प्रयत्न किये, पर सफल नहीं हुए। अतः शक्ति की पत्नी अदृश्यन्ती को साथ लेकर वे हिमालय पर पहुँचे। एक बार वसिष्ठने वेदाध्ययन की ध्वनि सुनी तो चकित रह गये, इसलिए कि वेद–पाठ करने वाला कोई वहाँ दिखाई नहीं दे रहा था। तब अदृश्यन्ती ने उन्हें बता दिया कि शक्ति का पुत्र मेरे गर्भ में है और उसी के वेदाध्ययन की ध्वनि सुनी गयी है। यह सुनकर वसिष्ठ इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने मृत्यु की इच्छा छोड़ दी। जन्मोपरांत पराशर ने सुन लिया कि राक्षस कल्माषपाद ने उनके पिता शक्ति को खा लिया था। यह सुनते ही उनके मन में राक्षसों के प्रति घोर विरोध उत्पन्न हुआ और उन्होंने संसार से राक्षसों का अन्त कर डालने का निश्चय किया। इस आशय से उन्होंने अपना राक्षस–सत्र आरंभ किया जिसमें राक्षस मरते जा रहे थे। कई राक्षस स्वाहा हो गये तो निऋति की आज्ञा पाकर महर्षि पुलस्त्य पराशर के पास गये और राक्षसवंश को बचाये रखने के लिए राक्षस–सत्र पूर्ण करने की प्रार्थना की। उन्होंने अहिंसा का उपदेश दिया। व्यास ने भी पराशर को समझाया कि बिना किसी दोष के समस्त राक्षसों का संहार करना अनुचित है, इसलिए आप अपना यज्ञ पूर्ण करें क्योंकि साधुओं का भूषण क्षमा है –

अलं निशाचरर्दगधर्दी नैश्यकारिभिः।

सत्रं ये विरमत्ये तत्क्षमाजरा हि साधनः [28]

पुलस्त्य तथा व्यास के सदुपदेशों से प्रभावित होकर पराशर ने अपना राक्षस–सत्र पूर्ण किया। उन्होंने अग्नि को हिमालय के समतल प्रदेश में रख दिया। पुलस्त्य ने राक्षस–सत्र पूर्ण करने के उपलक्ष्य में उन्हें कई प्रकार के आशीर्वाद दिये। उन्होंने बताया कि क्रोध करने पर भी तुम ने मेरे वंश का मूलोच्छेद नहीं किया। उसके लिए तुम को एक विशेष वर प्रदान करता हूँ। तुम पुराण संहिता के रचयिता बनोगे। देवता तथा परमार्थतत्त्व को यथावत् जान सकोगे और मेरे प्रसाद से निवृत्त और प्रवृत्तिमूलक धर्म में तुम्हारी बुद्धि निर्मल एवं असंदिग्ध रहेगी –

सन्ततेर्न ममोच्छेदः क्रुद्धेनापि यतः कृतः।

त्वयः तस्मान्महाभाग ददम्यन्यं महावरम् □

पुराणसंहिताकर्ता भवान्वत्स भविष्यति।

देवता पारमार्थ्य च यथाद्वेत्यते भवान् □

प्रवृत्ते च निवृत्ते च कर्मण्यस्तमला मितः।

मत्प्रसादादसन्दिग्धा यव वत्स भविष्यति [29]

नर्मदा के उत्तरी तट पर पराशर ने पुत्र–प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या की और पार्वती ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर उनकी इच्छा पूर्ण होने का आश्वासन दिया।

चेदिराज नामक उपरिचर वसु एक बार मृगया के लिए निकला, तो सुगंधित पवन, सुंदर वातावरण आदि से प्रभावित राजा को अपनी पत्नी याद आयी और उसका वीर्य–स्खलन हुआ। उसे अपनी पत्नी तक पहुँचाने की, राजा ने एक श्येन पक्षी से प्रार्थना की। श्येन जब उसे ले जा रहा था, उसे मांसपिंड समझ कर मार्ग में एक दूसरा श्येन पक्षी हड़पने लगा। तब वह वीर्य कालिन्दी के जल में जा गिरा,

---

28 पराशर स्मृति, अध्याय 1, पृ0 सं0 46।

[29] The Astrologers view on Heritage System, Jon N. Pundreek, 1993, Page. No. VIII. (Described in Bhumika)

जिसे ब्रह्मा के शापवश मछली के रूप में कालिन्दी में रहती आ रही अद्रिका नामक अप्सरा ने निगल लिया। फलतः उस मछली के गर्भ से एक पुत्री और एक पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र का नाम मत्स्य पड़ा, जो विराट राजा बना। पुत्री का नाम काली रखा गया और वह एक धीवर के यहाँ पालित हुई। काली या मत्स्यगंधा जब किंचित् बड़ी हुई, तब वह अपने पालित पिता की नाव चलाने के काम में सहायता करती थी। एक प्रातःकाल पराशर यमुना पार करने के लिए आये। धीवर कन्या काली ने ही नाव खेयी। उसे देख पराशर मुनि मुग्ध हो गये और उससे कामपूर्ति की प्रार्थना की। दूसरा कोई न देख पाए, इसके लिए मुनि ने कुहासे की सृष्टि की और उसके साथ संभोग किया, जिसके फलस्वरूप पराशर–पुत्र व्यास का जन्म हुआ।[30],

पराशर के अनुग्रह एवं आशीर्वाद से काली का कौमार रह गया। पराशर के आश्लेष से काली सुवास से युक्त सत्यवती हुई। सत्यवती को योजनगंधा होने का वरदान दिया। यही सत्यवती कालांतर में शंतनु की पत्नी हुई, जिसके गर्भ से चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य का जन्म हुआ। विचित्रवीर्य ने काशीराज–पुत्री अंबिका तथा अंबालिका को ब्याहा, पर वह निस्संतान मर गया। तब सत्यवती के आग्रह पर अंबिका तथा अंबालिका के साथ व्यास का नियोग हुआ और फलस्वरूप पांडु एवं धृतराष्ट्र का जन्म हुआ। पराशर–पुत्र व्यास वेदों का विभाजन करके वेदव्यास कहलाये। महाभारत एवं पुराणों के रचयिता होने का श्रेय भी व्यास को दिया जाता है।

पराशर के उलूक आदि पुत्र भी थे। भविष्यपुराण के अनुसार उलूक की बहन उलूकि का पुत्र वैशेषिक शाखा का प्रवक्ता कणाद हुआ।

पराशर ने महाराज जनक से मिलकर अध्यात्म के संबंध में चर्चा की। एक बार राजा जनक ने कल्याणप्राप्ति का उपाय जानना चाहा, तो पराशर ने सदाचार एवं धर्मनिष्ठा का उपदेश दिया।

धर्म एव कृतः श्रेयानिहलोके परत्र च।

तस्माद्धि परमं नास्ति यथा प्राहुर्मनीषिणः□

अर्थात् मनीषियों का कथन है कि धर्म के विधिपूर्वक अनुष्ठान से इहलोक एवं परलोक मंगलकारी बनते हैं। उससे बढ़कर श्रेयस्कर दूसरा कोई साधन नहीं है। सत्संग को पराशर ने महत्त्व दिया।

इनसे प्रवृत्त पराशर गोत्र में गौर, नील, कृष्ण, श्वेत, श्याम और धूम्र छह भेद हैं। गौर पराशर आदि के भी अनेक उपभेद मिलते हैं। उनके पराशर, वसिष्ठ और शक्ति तीन प्रवर हैं।[31]

ऋग्वेद में पराशर की कई ऋचाएँ (1, 65–73–9, 97) हैं। विष्णुपुराण, पराशर स्मृति, विदेहराज जनक को उपदिष्ट गीता (पराशर गीता) जो महाभारत के शांतिपर्व का एक भाग है, बृहत्पराशरसंहिता आदि पराशर की रचनाएँ हैं। भीष्माचार्य ने धर्मराज को पराशरोक्त गीता का उपदेश किया है।[32] इनके नाम से संबद्ध अनेक ग्रंथ ज्ञात होते हैं :–

1. बृहत्पराशर होरा शास्त्र,
2. लघुपाराशरी (ज्यौतिष),
3. बृहत्पाराशरीय धर्मसंहिता,
4. पराशरीय धर्मसंहिता (स्मृति),
5. पराशर संहिता (वैद्यक),

30 श्रीमद्देवीभागवत्पुराणम् 2/2अध्याय,मनसुखराय मोर, 5 क्लाइव रो, कलकत्ता

31 मत्स्यपुराण, पृष्ठ संख्या 210।

32 महाभारत, शांतिपर्व, पृ0 सं0 291–297।

6. पराशरीय पुराण (माधवाचार्य ने उल्लेख किया है),

7. पराशरौदितं नीतिशास्त्र (चाणक्य ने उल्लेख किया है),

8. पराशरोदितं, वास्तुशास्त्र (विश्वकर्मा ने उल्लेख किया है)।

बृहत्पाराशर होराशास्त्र ग्रन्थ का परिचय

बृहत्पाराशर एक ज्योतिष संहिता है, जिसमें युगानुरूप धर्म एवं कर्म निष्ठा पर अत्यधिक बल दिया गया है। कहते हैं कि, एक बार ऋषियों ने कलियुग योग्य धर्मों को समझाने की व्यास से प्रार्थना की। व्यासजी ने अपने पिता पराशर से इसक संबंध में पूछना उचित समझा। अतः वे मुनियों को लेकर बदरिकाश्रम में पराशर के पास गये। पराशर ने समझाया कि कलियुग में लोगों की शारीरिक शक्ति कम होती है, इसलिए तपस्या, ज्ञान–संपादन, यज्ञ आदि सहज साध्य नहीं हैं। इसलिए कलिकाल में दान रूप धर्म की महत्ता है।

तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।

द्वापरे यज्ञमित्यूचुर्दानमेकं कलौयुगे □

कलियुग में पराशर प्रोक्त धर्म को विशेष मान्यता प्राप्त हुई है। कहा गया है कि –

—तेतु मानवो धर्मस्त्रेतायां गौतमः स्मृतः।

द्वापरे शंखलिखितः कलौ पराशरः स्मृतः□[33]

अर्थात् सत्ययुग में मनु द्वारा प्रोक्त धर्म मुख्य था, त्रेता में गौतम की महत्ता थी। द्वापर में शंख–लिखित मुनियों द्वारा कहे गये धर्म की प्रतिष्ठा थी। पर कलिकाल में पराशर से निर्दिष्ट धर्म की प्रतिष्ठा है। पराशर मुनि अहिंसा को परमाधिक महत्त्व देते हैं। पराशरस्मृति में गोमाता को न केवल अवध्य, अपि तु पूजनीय भी कहा गया है। वैसे ही वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रमों का विशद वर्णन उनके स्मृति ग्रंथ में है। ग्रंथ के अन्त में योग पर जोर दिया गया है। पराशर ने आयुर्वेद एवं ज्योतिष पर भी अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। ऋषि पराशर ने कई विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर उसे दुनिया को प्रदान किया था। ऋग्वेद में पराशर की कई ऋचाएं हैं। विष्णु पुराण, पराशर स्मृति, विदेहराज जनक को उपदिष्ट गीता (पराशर गीता), बृहत्पराशरसंहिता आदि पराशर की रचनाएं हैं।

पराशर गीता महाभारत के शांति पर्व में भीष्म और युधिष्ठिर के संवाद में युधिष्ठिर को भीष्म राजा जनक और पराशर के बीच हुए वार्तालाप को प्रकट करते हैं। इस वार्तालाप को 'पराशर गीता' के नाम से जाना जाता है। इसमें धर्म–कर्म संबंधी ज्ञान की बातें हैं। दरअसल, शांति पर्व में सभी तरह के दर्शन और धर्म विषयक प्रश्नों के उत्तर का विस्तृत वर्णन मिलता है।

पराशर ऋषि ने अनेक ग्रंथों की रचना की जिसमें से ज्योतिष के ऊपर लिखे गए उनके ग्रंथ बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। प्राचीन और वर्तमान का ज्योतिष शास्त्र पराशर द्वारा बताए गए नियमों पर ही आधारित है। ऋषि पराशर ने ही बृहत्पाराशर होरा शास्त्र, लघुपराशरी (ज्योतिष) लिखा है।

ऋषि पराशरजी एक दिव्य और अलौकिक शक्ति से संपन्न ऋषि थे। उन्होंने धर्मशास्त्र, ज्योतिष, वास्तुकला, आयुर्वेद, नीतिशास्त्र, विषयक ज्ञान को प्रकट किया। उनके द्वारा रचित ग्रंथ वृहत्पराशर होराशास्त्र, लघुपराशरी, वृहत्पराशरीय धर्म संहिता, पराशर धर्म संहिता, पराशरोदितम, वास्तुशास्त्रम, पराशर संहिता (आयुर्वेद), पराशर महापुराण, पराशर नीतिशास्त्र, आदि मानव मात्र के लिए कल्याणार्थ रचित ग्रंथ जगप्रसिद्ध हैं जिनकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है।

गीता में कहा गया है कि कर्म और उसका फल प्राप्त करने के लिए मनुष्य को जन्म–जन्मांतर तक इस भूलोक में अपना जीवन धारण करना पड़ता है। इस प्रकार कर्म और पुनर्जन्म एक दूसरे से

33 पराशर स्मृतिप्र अध्याय 1, पृ0 सं0 14।

जुड़े हुए हैं। कर्मों के फल के भोग के लिए ही पुनर्जन्म होता है तथा पुनर्जन्म के कारण फिर नए कर्म संग्रहीत हाते हैं। इस प्रकार पुनर्जन्म के दो उद्देश्य हैं। पहला यह कि मनुष्य अपने पूर्व जन्मों के कर्मों के फल का भोग करता है जिससे वह उनसे मुक्त हो जाता है।

दूसरा यह कि इन भोगों से अनुभव प्राप्त करके नये जीवन में इनके सुधार का उपाय करता है जिससे बार बार जन्म लेकर जीवात्मा विकास की ओर निरंतर बढ़ती जाती है तथा अन्त में अपने सम्पूर्ण कर्मों द्वारा जीवन का क्षय करके मुक्तावस्था को प्राप्त होती है। एक जन्म में एक वर्ष में मनुष्य का पूर्ण विकास नहीं हो सकता है। पुनर्जन्म का एक कारण है अपने पूर्व जन्मों में किए गए स्थूल कर्मों का भोग। ये स्थूल कर्म स्थूल लोक में ही भोगे जा सकते हैं, इसलिए उन समस्त स्थूल कर्मों का फल अंश संचित कोश में विद्यमान रहता है जिसका थोड़ा सा अंश एक जन्म में भोग हेतु निर्धारित किया जाता है जिसे प्रारब्ध कहा जाता है। यह प्रारब्ध अवश्य भोगना पड़ता है। भोगे बिना इससे मुक्ति नहीं होती। किन्तु इस संचित कोश में कई ऐसे कर्म हैं जो एक ही जन्म में नहीं भोगे जा सकते हैं।एक कर्म एक ही स्थान या पद से भोगा जा सकता है किंतु दूसरा इसके विपरीत ऐसा कर्म है जिसके लिए दूसरी अवस्था चाहिए। इसके लिए मनुष्य को दूसरा जन्म लेना पड़गा। संचित कर्म का कितना अंश एक जन्म में भोगना है इसका निर्णय कर्म के अधिकारी देवता करते हैं। इसी भोग कम्र के अनुसार उसे कुल देश स्थान वातावरण शरीरादि मिलते हैं। ये कर्म कितने में भुक्त हो जाएंगे इसके अनुसार उसकी आयु का निर्धारण होता है। कर्मों के अनुसार ही व्यक्ति के शरीर में ऐसे चिह्न प्रकट होते हैं जिनके आधार पर हस्त सामुद्रिक का विकास हुआ। इसी प्रारब्ध भोग के अनुसार उसके ज्ञान तंतुओं का विकास एवं मस्तिष्क की रचना होती है जिससे वह मानसिक गुणों एवं अवगुणों को प्रकट कर सके।

यदि कर्म नियम और पुनर्जन्म को नहीं माना जाए तो ईश्वर उसे सुख दुख क्यों देता है जबकि पूर्व के उसके बुरे कर्म हैं ही नहीं। ईश्वर ने बिना कारण किसी को दीन हीन व किसी को सम्पन्न क्यों बनाया किसी को मूढ़ व किसी को प्रतिभाशाली किसी को ईमानदार व किसी को बेईमान किसी को दयालु व किसी को दुष्ट किसी को परोपकारी व किसी को अत्याचारी आदि क्यों बनाया? ऐसे अनेक प्रश्नों का उत्तर एक जन्म मानने वाले नहीं दे सकते जबकि इन सबका उत्तर कर्म नियम और पुनर्जन्म से ही मिलता है अन्य कोई कारण ज्ञात नहीं है। जब पुनर्जन्म का कोई कर्म ही नहीं है तो वह किसके भोग भोग रहा है? यदि कर्मों का फल एवं भोग नहीं है तो कर्म अर्थहीन हो जाते हैं। फिर अच्छे और बुरे कर्म का औचित्य ही नहीं रहता। फिर तो कर्म पेट भरने का साधन मात्र रह जाते हैं। ऐसे में नैतिकता, सदाचार, प्रेम, दया, करूणा आदि गुण अर्थहीन हो जाएंगे। मनुष्य की भविष्य की सारी आशाएं तथा उसकी उन्नति का आधार ही समाप्त हो जाएगा।

पंचतत्व महाभूतों से निर्मित इस स्थूल शरीर के अन्दर एक सूक्ष्म शरीर भी होता है तथा इन दोनों को चेष्टा जीवात्मा करती है जिसे कारण शरीर भी कहते हैं। यही कारण शरीर जीव मृत्यु हाने पर स्थूल देह को यहीं छोड़कर सूक्ष्म शरीर से दूसरी नई स्थूल देह में निर्माण की प्रारंभिक स्थिति में ही प्रवेश कर जाता है।

वह गर्भ में बढ़ता हुआ निश्चित समय पर बाहर आकर धीरे–धीरे एक विकसित भिन्न स्वभावयुक्त मानव या कोई अन्य प्राणी बन जाता है। सूक्ष्म शरीर को अपने सामान्य नेत्रों से नहीं देखा जा सकता। इसी सूक्ष्म शरीर की आकृति के स्थूल शरीर की आकृति में पुनः प्रकट होने की क्रिया को पुनर्जन्म का नियम कहते हैं।

किसी स्थान के प्रति प्रथम दृष्टि में ही अनुराग जाग्रत होने का कारण पूर्व जीवन में उस स्थान पर रहने की भावना है। इसी प्रकार पहली बार ही किसी से मिलने पर प्रेम जागरण का कारण भी पूर्व जन्म में एक साथ व्यतीत किया जीवन या कुछ काल ही है। इसका तात्पर्य यह है कि इन दोनों जीवात्माओं में इससे पूर्व भी प्रेम था तथा एक दूसरे को देखकर दोनों ऐसा सोचते हैं कि इससे पूर्व भो वे कभी एक दूसरे से मिले थे। इस प्रकार के प्रेम का कदाचित ही विच्छेदन होता है।

विकासवाद के सिद्धान्त के समान ही पुनर्जन्म का सिद्धांत है। विज्ञान कहता है कि मनुष्य अपने मस्तिष्क के 15 प्रतिशत भाग का ही उपयोग कर रहा है। सामान्य व्यक्ति तो उसके ढाई प्रतिशत का ही उपयोग कर जी रहा है, बाकी का अंश सुप्त पड़ा है। यदि इसे विकसित किया जा सके तो प्रतिभा के विकास की अनंत संभावनाएं प्रकट हो सकती हैं।

अध्यात्म भी सहस्राब्दियों से कहता आ रहा है कि मनुष्य में सभी ईश्वरीय शक्तियां विद्यमान हैं जिन्हें जाग्रत करके मनुष्य ईश्वर तुल्य बनने की क्षमता प्राप्त कर सकता है।

जब जीव अपने जन्म की तैयारी कर रहा होता है तब दूसरी ओर उसके योग्य स्थूल शरीर बनाने की तैयारी दूसरों द्वारा की जा रही होती है। उस जीव के पूर्व जन्मों के संस्कारों के अनुसार उसके जन्म के स्थान समय कुल एवं वातावरण का तथा उसकी कामनाओं के अनुसार नये शरीर का निर्धारण होता है।

योग्य शरीर का निर्धारण कर्मों के अधिकारी देवता करते हैं। सभी योग्यताओं वाला शरीर मिलना कठिन है इसलिए एक शरीर से उसके थोड़े से गुण ही प्रकट हो सकते हैं। अन्य गुणों के विकास के लिए उसे दूसरा जन्म लेना पड़ेगा। यह सारा कार्य कर्म के अधिकारी देव करते हैं।

जीवात्मा के विकास की यह स्वाभावित प्रक्रिया है जिससे यदि मनुष्य अपने दुराग्रह एवं अहंकार के कारण बाधा उपस्थित न करे तो प्रकृति के नियम के अनुसार चलकर वह स्वाभाविक रूप से उन्नति करता हुआ कई जन्मों में जाकर पूर्णत्व की प्राप्ति कर सकता है।

हर जन्म में भोगों को भोगना, तभी उनसे होने वाले परिणामों से दुख उठाना, इससे मनुष्य कई जन्म में जाकर यह शिक्षा ग्रहण करता है कि इन वासनाओं के कारण ही आसक्ति होती है तथा यही आसक्ति बंधन का कारण बनती है। इसी आसक्ति के कारण मनुष्य की इच्छा भोगों की ओर जाती है किन्तु सभी भोग अन्त में दुखदायी ही सिद्ध होते हैं।

इसके बाद उसकी भोगों के प्रति अरूचि हो जाती है। यही उसाक वैराग्य है। यह उच्च चेतना प्राप्त व्यक्तियों का अनुभव है। जो उन ज्ञानियों के वचन मानकर विरक्त हो जाता है उसकी प्रगति शीघ होती है। अन्यथा स्वयं अनुभव प्राप्त करने में कई जन्म गंवाने पड़ते हैं। सृष्टि का नियम ही ऐसा है कि कर्म का फल अवश्य होता है तथा सभी भोग अन्त में दुखदायी होते हैं। यह त्याग आंतरिक प्रेरणा से होता है तभी सच्चा वैराग्य है।

माया, भ्रम, अज्ञान के अनेक मार्ग हैं किन्तु सत्य का एक ही मार्ग है। जब वासना एवं कामना से व्यक्ति ऊपर उठ जाता है तभी उसे ईश्वर के सामीप्य का अनुभव होता है। जब तक मुक्ति न हो जाए तब तक इस जन्म–मृत्यु चक्र से गुजरना पड़ेगा। ईश्वर और आत्मा को जान लेने मात्र से कुछ लाभ नहीं होता। इनका अपरोक्ष अनुभव हो अंतिम उपलब्धि है। इन कर्म नियमों के अनुसार जीवन को चलाना धार्मिक होने के लक्षण हैं। प्रगति का यही एक मार्ग है।

वैदिक ज्योतिष शास्त्र में जिस पद्धति को सबसे ज्यादा महत्व दिया जाता है वह पराशरीय पद्धति है। पराशरीय पद्धति मूल रुप से ज्योतिष के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "बृहद पराशर होरा शास्त्र" के सिद्धांतों पर चलता है। इस ग्रंथ के रचयिता महर्षि पराशर हैं और इसी कारण से इस पद्धति को पराशरीय पद्धति कहते हैं। "बृहद पराशर होरा शास्त्र" वैदिक ज्योतिष शास्त्र का एक अद्भुत ग्रन्थ है जिसके नियमो का अनुसरण राव एवं बीबज्योतिष शास्त्र के लगभग सभी ग्रन्थ करते है और ज्योतिष में गणित व फलादेश सम्बन्धी सभी नियम उन्हीं की देन है।

वर्त्तमान में बृहत्पाराशर होराशास्त्र को सौ अध्यायों वाला बना दिया गया है, परन्तु एन0 एन0 कृष्णा राव एवं बी बी चौधरी के 1963 ई0 में अंग्रेजी में छपी हुई वर्जन के अनुसार इसमें केवल 71

अध्यायों का जिक्र ही मिलता है।[34] यही बात मुम्बई से प्रकाशित खेमराज प्रेस के प्रथम संस्करण में भी देखने को मिलती है, परन्तु बाद के संस्करणों में फिर से 29 अध्यायों को जोड़ दिया गया है :–

The oldest edition by Khemraj Press of Mumbai having 71 chapters contains a verse saying that treatise has 100 chapters ("horā-shatādhyāyi" : verse 14 of 71st chapter), and the first part had 11000 verses, although even enlarged modern editions contain only half that number of verses. But 29 chapters were absent in that edition. Later editions contain 97, 98, 99 and even 100 chapters. But the source and dating of the extra material is not known. One important later edition, by Pt Sitaram Jha, which has found its way into internet and which was the basis of all English translations, claimed that the Khemraj Press edition contained many spurious chapters. Thus, the number of non-controversial chapters will reduce to much less than 71. None of these editors used any material from any ancient commentary.

Currently, four versions of this treatise are available (all other editions use the text of Pt Sitaram Jha's version) : by Khemraj Press, by Pt Sitaram Jha, by Pt Devachandra Jha, and by Ganeshadatta Pathak. These are all Hindi editions. The text prepared by Pt Sitaram Jha based on the manuscript supplied by Pt Jeevanath Jha was later used by all English translators and only this version is available online. Pt Sitaram Jha claimed in his introduction that he introduced many new things and revised much old material in the manuscript, so that the version of Pt Sitaram Jha is completely different from all other versions in syntax, although almost all verses carry same meanings. It seems as if some modern expert of prosody rewrote this entire text. The text of Pt Devachandra Jha was based on a large number of complete and incomplete manuscripts. Pt Ganeshdatta Pathak also used many manuscripts and his text differs from that of Pt Devachandra Jha at few places. The Khemraj Press edition contains a large body of unique materials, and although it has minimum number of chapters, it contains the largest number of verses : 5781 verses as compared to 4001 verses in Pt Sitaram Jha's edition. The first verse of the second part in the Khemraj Press edition says that the first part had 11000 verses in 80 chapters. The same text says that there were 100 chapters originally. Hence, the second part had only 20 chapters, although all modern editions have more chapters in the second part and much more in the first part than claimed by the afore-cited Sanskrit verse. No critical and comparative edition has been brought out to fix the problem of authentic parts of this treatise.

---

[34] The Brihat Parashara Hora Shastra is the most comprehensive extant work on natal astrology in Hindu astrology ascribed to any Rishi or sage according to the text itself. Its oldest printed version is a composite work of 71 chapters, in which the first part (chapters 1-51) dates to the 7th and early 8th centuries, and the second part (chapters 52-71) dates to the latter part of the 8th century [citation]. A commentary by Govindasvamin (a mathematician) on the second portion, which presupposes the first, is dated to c. 850 CE and attests to the scope of the work at that date [citation]. The text says that this work was created by Sage Parashara, father of Vedavyasa who was the compiler of the Epic Mahabharata for the benefit of Kaliyuga. An English translation was published by N.N. Krishna Rau and V.B. Choudhari in 1963, in two volumes.

Refrences:

- भारतीय ज्योतिष विज्ञान, रविन्द्र कुमार दूबे, प्रतिभा प्रतिष्ठान, प्रथम, 2002, 1661, दखनीराय स्ट्रीट, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली।
- भारतीय ज्योतिष, डॉ नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य, भाररतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नवम, 1981, बी 45/47, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।
- भृगु संहिता, फलित प्रकाश, मू0 लेखक – भृगु ऋषि, व्याख्याकार – राजेश दीक्षित, देहाती पुस्तक भण्डार, चावड़ी बाजार, दिल्ली ।
- बृहज्जातकम्, व्या0 – केदारदत्त जोशी, मोतीलाल बनारसीदास, 1985।
- बृहज्ज्योतिःसार, भाषानुवादक – पं0 श्री सूर्यनारायण सिद्धान्ती, तेजकुमार बुक डिपो प्रा लिमिटेड, उन्नीसवाँ, 2000, पोस्ट बॉक्स 85, 1 त्रिलोकनाथ रोड, लखनऊ।
- बृहज्ज्यौतिषसारः, सम्पादक – श्री रूप नारायण शर्मा, ठाकूर प्रसाद पुस्तक भण्डार, कचौड़ीगली, वाराणसी।
- चमत्कार चिन्तामणि, पं0 राजाराम ज्योतिषी फर्रूखाबाद, तेजकुमार बुक डिपो प्रा लिमिटेड, चतुर्थ संशोधित संस्करण, 2003, पोस्ट बॉक्स 85, 1 त्रिलोकनाथ रोड, लखनऊ।
- पराशर स्मृति, पृ0 गुरूप्रसाद शर्मा द्वारा भाषानुवादित, बाबू हरिनारायण वर्मा बुकसेलर, प्रथम संस्करण, 1923 ई0, नागेश्वर प्रेस, बनारस।
- Astrology Yoga Collections, Internet, Transmitted in 2009, www.Wikipedia.org
- भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नवम संस्करण, 1981, भारतीय ज्ञानपीठ, बी 45/47, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।
- भृगु संहिता फलित प्रकाश, मू0 लेखक – भृगु ऋषि व्याख्याकार – प्रेम कुमार शर्मा, देहाती पुस्तक भण्डार, 2009 चावड़ी बाजार, दिल्ली ।
- अष्टाध्यायी, पाणिनी, निर्णय सागर प्रेस, रामलाल कपूर ट्रस्ट, अमृतसर, सोनीपत।
- अथर्ववेद, सायण भाष्य, शंकर पांडुरंग पंडित, निर्णय सागर प्रेस, 1962, विश्व विद्यालय शोध संस्थान, होशियारपुर।
- अथर्ववेद संहिता, सातवलेकर श्रीपाद दामोदर, स्वास्थ्य मंडल, 1950, पारडी, सूरत
- अत्ति स्मृति, मोर मनसुख राय, गुरू मंउल आश्रम, 1953, कलकत्ता।